ISSN 2319-5339 IISUniv.J.A. Vol.6(1), 110-113 (2017)

सिनेमा और साहित्य

पूनम सेठी

साहित्य को समाज का दर्पण कहा जाता है। साहित्य समाज रूपी शरीर की आत्मा है। साहित्य अजर-अमर है। साहित्य का विकसित रूप ही आज सिनेमा के नाम से जाना जाता है। साहित्य की प्रत्येक विधा को आत्मसात करने में सक्षम और समाज पर सीधे व षीघ्र प्रभाव उत्पन्न करने के गुणों के परिणामस्वरूप ही सिनेमा की साहित्य अध्ययन में उपादेयता स्वतः स्पष्ट होती है। साहित्य और सिनेमा दोनों ही समाज रूपी सिक्के के दो पहलू हैं। दोनों ही समाज में घटित घटनाओं और जीवन का आईना हैं। इनके बिना समाज की भावना एवं संवेदनाओं का कोई मूल्य निर्धारित नहीं हो सकता। सिनेमा से साहित्य का सम्बन्ध उतना ही पुराना है जितना स्वयं सिनेमा पुराना है। सिनेमा वैज्ञानिक युग की देन है और वैज्ञानिक उन्नति विष्व में औद्यौगीकरण के क्रम में षुरू हुई। औद्योगीकरण से ही आधुनिकता का सूत्रपात हुआ। इस प्रकार सिनेमा एक आधुनिक कला प्रतीत होती है, जो ऐसे कैमरे के आविष्कार से षुरू हुई जो चलती-फिरती वस्तुओं तथा व्यक्तिओं के चित्र ले सकता था । सिनेमा की तुलना में साहित्य का इतिहास पुराना है। एक आधुनिक कला सिनेमा और एक अत्यन्त पुरानी साहित्य परम्परा के बीच अत्यन्त गहरा सम्बन्ध है।

21 वीं सदी के इस दौर में आज समस्त विष्व पर सबसे ज्यादा प्रभाव जिस माध्यम का है वह सिनेमा ही है। हमारे रीति-रिवाज, खान-पान, रहन-सहन से लेकर चिंतन तक सिनेमा की पहुँच विलक्षण प्रतिमान लेकर उपस्थित हुई है। समूची मानव सभ्यता का यथार्थ जिस माध्यम से हमारे सामने उपस्थित है, उसमें सिनेमा की भूमिका अग्रणी है। यह सिनेमा ही है जिसने विष्व- संस्कृति की अवधारणा को नये आयाम दिए हैं। जनसंचार के सषक्त माध्यम के रूप में या कहें कि मानवीय संवाद बनाए रखने के लिए सिनेमा आज के समय की सबसे बड़ी जरूरत है।

दृष्य माध्यम की एक प्रमुख विधा के रूप में हम तक पहुँचने वाली इस विधा को आज 'सैल्युलाइड साहित्य' तक की संज्ञा दी गई है। निःसन्देह सिनेमा को आज कला के रूप में स्वीकृति मिल चुकी है। जिस प्रकार अन्य विधाएँ सिनेमा से प्रभावित हुई हैं, उसी प्रकार हिंदी साहित्यिक कृतियों पर भी सिनेमा का विस्तृत प्रभाव देखा जा सकता है। हिंदी साहित्यिक कृतियों पर निर्मित होने वाली फिल्मों में बहुत सी संभावनाएं नजर आती हैं और महसूस होता है कि यदि सिनेमा और साहित्य के सम्बन्धों को सही ढंग से परखा जाए तो विस्तृत जनसमुदाय को विभिन्न रचनाकारों की कालजयी कृतियों से परिचित कराया जा सकता है।

सिनेमा नाटक का ही विकसित रूप है अथवा वह एक ऐसा नाटक है जो जीवन के रंगमंच पर खेला जाता है और जिसकी प्रस्तुति वैज्ञानिक उपकरणों की सहायता से होती है। रंगमंच उसका दूसरा रूप है, जो उसका पूर्ववर्ती है, पर सिनेमा की आषातीत उन्नति के बावजूद जीवित है। रंगमंच की आवष्यकता हो अथवा सिनेमा की, साहित्य उसकी पूर्ति अनेक तरीकों से करता रहा है। नाटक उपलब्ध होगा, तभी तो वह रंगमंच पर अथवा सिनेमा के माध्यम से प्रस्तुत किया जा सकता है। पारसी रंगमंच पर अभिनीत अनेक नाटक आरम्भिक सिनेमा के आधार बने और ऐसे नाटकों की संख्या नगण्य नहीं है। सच तो यह है कि पारसी रंगमंच पर खेले गए नाटकों की नींव पर भारतीय सिनेमा विकसित हुआ। अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि बम्बई सिनेमा का आरम्भिक केंद्र इसीलिए बन गया क्योंकि वह पारसी थियेटर कम्पनियों का केंद्र पहले बना और पारसी रंगमंच पर खेले गये नाटकों के निर्माता, अभिनेता और गायक कालान्तर में सिनेमा की फिल्मों के निर्माता, अभिनेता तथा गायक बन गये। विकसित तकनीक का लाभ उठाकर अनेक थियेटर कम्पनियाँ धीरे-धीरे फिल्मी

कम्पनियों में रूपान्तरित हो गईं। इस प्रकार नाटकों की नीवं पर, विषेषतः पारसी रंगमंच पर मंचित नाटकों की नीवं पर भारतीय सिनेमा विकसित हुआ।

भारत में सिनेमा का उद्भव 20 वीं शती के प्रारम्भ के साथ ही हो गया था। सन् 1913 में भारतीय फिल्मों के पितामह दादा साहेब फाल्के की पहली फिल्म 'राजा हरिष्चंद्र' प्रदर्षित हुई। तत्पष्चात भारतीय सिनेमा निरन्तर उन्नति के पथ पर अग्रसर होता चला गया। सिनेमा सम्बन्धी अनेक उपकरण तथा उपादान यथा कैमरे, ग्रामोफोन, लाइट्स, छतरी, रील, रिकार्ड प्लेयर आदि समय के साथ नयी तकनीक का उपयोग कर परिवर्तित हो गये। इन सौ वर्षों के सफर में भारतीय सिनेमा कई उतार -चढ़ाव से गुजरा है।

पिछले कुछ दषकों से विष्व के समस्त फिल्म निर्माताओं को साहित्य ने फिल्म के निर्माण के लिए अपनी ओर आकर्षित किया है। साहित्य व सिनेमा का रिष्ता समय के साथ ज्यादा घनिष्ठ व सुदंर होता चला गया। साहित्य का फिल्मों में रूपांतरण करना भारतीय फिल्म जगत के इतिहास का एक पुराना अध्याय रहा है। दर्षकों का साहित्य के प्रति बढ़ता रूझान ही साहित्य को सुनहरे पर्दे पर आने की अनुमति दे पाया है। बात चाहे प्रसिद्ध लेखक विलियम शैक्सपियर या रस्कीन बोण्ड या रविन्द्रनाथ टैगोर की हो, भारतीय सिनेमा ने विष्व के विभिन्न साहित्यों से प्रेरणा ली है। फिर भी भारतीय फिल्म निर्माताओं का भारतीय साहित्य की ओर झुकाव अधिक स्पष्ट नजर आता है।

सिनेमा के सहयोग से साहित्य भी प्रभावित तथा अधिक लोकप्रिय बनता है। कितनी ही साहित्यिक कृतियाँ फिल्मीकरण के बाद लोकप्रियता के आकाष को छू चुकी हैं। भीष्म साहनी का उपन्यास 'तमस' फिल्मीकरण के बाद कई संस्करणों में बिका। भगवती चरण वर्मा के उपन्यास 'चित्रलेखा' को भी फिल्म बनने के बाद बड़ी लोकप्रियता मिली। यही बात शरतचंद्र के उपन्यास 'देवदास' के लिए भी कही जा सकती है। इस उपन्यास पर बनी फिल्म को दर्षकों ने खूब सराहा और इसने सफलता के नए कीर्तिमान बनाएं। षरत चंद्र चट्टोपाध याय, रविन्द्र नाथ टैगोर तथा बंकिमचंद्र चटर्जी के उपन्यासों पर आधारित फिल्में भारतीय सिनेमा के इतिहास की अनमोल धरोहर हैं। भारतीय सिनेमा ने कुछ लेखकों की शानदार रचनाओं को बड़े ही आकर्षक रूप में दर्षकों के सामने रखा है। वर्ष 1960-1970 के दशक में गुलशन नंदा के उपन्यासों पर आधारित कुछ फिल्में यथा 'कटी पंतग', 'नील कमल', 'खिलौना' व 'षर्मिली' को दर्षकों द्वारा सराहा गया। गुलजार की 'मासूम' समेत कुछ अन्य फिल्में, मन्नू भण्डारी व वासु चटर्जी कृत 'रजनीगंधा' एवं राजेन्द्र यादव-वासु चटर्जी कृत 'सारा आकाष' आदि की पटकथा पर आधारित है।

अनेक उपन्यासों, कहानियों तथा नाटकों पर जो फिल्में बनी हैं, वे साहित्य से फिल्म के गहरे रिष्ते को रेखांकित करती हैं। स्वतंत्रता से पूर्व भी बहुत से निर्माता निर्देशकों ने हिंदी की साहित्यिक कृतियों को फिल्माने के प्रयास किए थे जिनमें हमें सफलता-असफलता दोनों ही दृष्टिगोचर होती हैं। लेकिन हाल ही में हिंदी साहित्यिक कृतियों पर निर्मित होने वाले सिनेमा में बहुत सी संभावनाएँ नजर आती हैं और लगता है कि यदि साहित्य और सिनेमा के संबंधों को सही ढंग से परखा जाए तो विस्तृत जन समुदाय को विभिन्न रचनाकारों की कालजयी कृतियों से परिचित कराया जा सकता है। दूरदर्षन जैसे छोटे दृष्य माध्यम में तो 'काला जल' , 'निर्मला', 'मृगनयनी' जैसी हिंदी की साहित्यिक कृतियों को उसी रूप में फिल्माने के सफल प्रयोग भी हुए हैं, जिनसें आम आदमी शानी तथा प्रेमचंद के रचनाकर्म को दृष्य बिम्बों में देख सका है।

भारतीय सिनेमा का वर्तमान दषक युवा लेखक चेतन भगत द्वारा रचित उपन्यासों से आकर्षित रहा है। उनकी सभी रचनाओं ने सुनहरे पर्दे पर अपनी अमिट छाप छोड़ी है। उनके उपन्यास 'वन नाइट एट ए कॉल सेन्टर' को 'हैलो' नामक फिल्म के रूप में सुनहरे पर्दे पर स्थान मिला है। प्रसिद्ध फिल्म निर्माता विधु विनोद चोपड़ा

द्वारा निर्मित 'थ्री इडियटस' भारतीय सिनेमा जगत की एक सफलतम फिल्म है जो चेतन भगत के अपन्यास 'फाइव पॉइंट समवन' से प्रेरित है। इसी प्रकार ऑस्कर विजेता फिल्म 'स्लमडॉग मिलेनियर' लेखक विकास स्वरूप के प्रसिद्ध उपन्यास 'क्यू एण्ड ए' का रूपान्तरण है जो रातों रात करोड़ो दर्षकों की पसन्द बन गई।

भारतीय फिल्म निर्माताओं ने हिंदी के साथ-साथ अंग्रेजी साहित्य के कई उपन्यासों को भी फिल्मों में रूपांतरित किया है। प्रसिद्ध फिल्म निर्माता विषाल भारद्वाज ने विलियम शेक्सपियर के प्रसिद्ध नाटक 'मेकबेथ' को 'मकबूल' तथा 'ओथेलो' को 'ओमकारा' नाम की फिल्म से प्रदर्शित किया जिसे दर्षकों ने खूब सराहा। विषाल भारद्वाज ने रस्कीन बोण्ड के अंग्रेजी उपन्यास 'द ब्ल्यू अमब्रेला' का रूपांतरण कर 'द ब्ल्यू अमब्रेला' फिल्म का निर्माण किया जिसे 2006 में राष्ट्रीय अवार्ड से नवाजा गया। वर्तमान में विषाल भारद्वाज विलियम षेक्सपियर के प्रसिद्ध नाटक 'हेलमेट' पर 'हैदर' नामक फिल्म लेकर आए हैं।

अंग्रेजी साहित्य के एक अन्य लेखक जेन ऑस्टिन की रचनाओं से भी भारतीय सिनेमा अछूता न रहा है। उनके उपन्यास 'प्राइड एण्ड प्रिजुडिस' को फिल्म निर्माता गुरिन्दर चड्ढा द्वारा 'बल्ले-बल्ले अमृतसर टू एल ए' के नाम से सुनहरे पर्दे पर प्रदर्षित किया गया।

कुछ अन्य प्रसिद्ध उपन्यासकारें द्वारा लिखित उपन्यासों पर आधारित चर्चित फिल्में हैं।-

क्रम सं.	उपन्यासकार	उपन्यास	फिल्म में रूपांतरण
1.	आर के नारायण	गाइड	गाइड
2.	विमल मित्र	साहेब, बीवी, गुलाम	साहेब, बीवी, गुलाम
3.	मिर्जा हादी	उमराव जान अदा	उमराव जान
4.	शरत चंद्र चट्टोपाध्याय	देवदास	देवडी/देवदास
5.	शरत चंद्र चट्टोपाध्याय	परिणिता	परिणिता
6.	अमृता प्रीतम	पिंजर	पिंजर
7.	रवीन्द्रनाथ टैगोर	चोखेर बाली	चोखेर बाली
8.	चेतन भगत	द थ्री मिस्टेक ऑफ माय लाईफ	काई पो छे
9.	चेतन भगत	टू स्टेटस	टू स्टेट्स

उपन्यासों के साथ-साथ कहानियों पर भी ये प्रयोग सफलतापूर्वक हो रहे हैं। 'माया दर्पण', 'तीसरी कसम' , से लेकर 'उसकी रोटी' और', 'शतरंज के खिलाड़ी', जैसी कहानियों पर सफल फिल्में बनी हैं। इन कहानियों पर निर्मित फिल्में देखने से ज्ञात होता है कि सिनेमा में भी साहित्यिक सिनेमा जैसी धारा उभर रही है, जिसमें हिंदी कहानी का अपना महत्व है। यद्यपि कहानी के एक संक्षिप्त रूप को फिल्मांकन के माध्यम से मूल कथ्य में बनाए रखते हुए विस्तृत आकार देना दुरूह कार्य है लेकिन मोहन राकेश, प्रेमचंद, निर्मल वर्मा आदि साहित्यकारों की कहानियों पर निर्मित फिल्में देखने से ज्ञात होता है कि साहित्य की तरह इनमें भी एक गंभीरता है जो दर्षकों को समान रूप से सोचने पर विवष करती है।

फिल्मों में गीतों का भी विषेष महत्व है। गीतों के माध्यम से भी साहित्य सिनेमा की एक बड़ी जरूरत को पूरा करता है। फिल्म जगत के अपने गीतकार भी हैं, पर हिंदी तथा उर्दू के गीतकारों के योगदान को कम करके नहीं आँका जा सकता। असंख्य साहित्यिक गीत, गजलें तथा दोहे फिल्मों में स्थान पा चुके हैं। हिंदी,

उर्दू कवियों के अनेक गीत और गज़लें फिल्मों के कारण बहुत लोकप्रिय हुई। तात्पर्य यह है कि साहित्य सिनेमा का पूरक है और सिनेमा की अनेक आवष्यकताएँ साहित्य ने पूरी की हैं और यह क्रम आज भी चल रहा है।

फिल्म निर्माताओं के लिए साहित्य को फिल्म में रूपान्तरित करना चुनौती पूर्ण कार्य है। संवाद, भाषा, पहनावा, संस्कृति, कथानक आदि के चलते साहित्य की उस रचना में कुछ परिवर्तन करने के पष्चात् ही उसे फिल्म का रूप दिया जाता है। जब किसी रचना का रूपान्तरण किया जाता है तो उसमें कुछ बदलाव आना स्वाभाविक है। फिल्म निर्माताओं के लिए एक लम्बे उपन्यास को तीन घण्टे की फिल्म में रूपान्तरित करना एक कठिन कार्य है। फिर भी दर्षकों तथा फिल्म निर्माताओं ने फिल्म निर्माण के लिए साहित्य को पहली पसंद माना है।

साहित्य में जहाँ साहित्यकार विभिन्न पक्षों से प्रभावित होता हुआ साहित्यिक रचना करता है वहीं सिनेमा निर्देषक उस साहित्यिक कृति को मूल रूप में रखते हुए उसे ऐसा नया रूप देता है कि जिससे वह जीवंत और प्राणवान हो उठती है। कई उपन्यासकारो की कृतियाँ साहित्यिक रूप में उतना लोगों तक नहीं पहुँच पायीं जितनी कि सिनेमा माध्यम से। सिनेमा ने उस कृति को एक नवीन आयाम दिया।

आज सिनेमा व साहित्य की संबंधात्मक अवधारणाएँ विभिन्न स्तरों पर विभिन्न हो गयी हैं। लेकिन स्थूल रूप में एक अच्छे निर्देषक की साहित्यिक कृति पर आधारित फिल्म ने जनमानस को सिनेमा की असली ताकत से परिचित तो कराया ही है। भीष्म साहनी द्वारा लिखे गये उपन्यास 'तमस' का उदाहरण इस संदर्भ में प्रासंगिक है। भारत - पाक विभाजन की पृष्ठभूमि पर रचित यह उपन्यास उस बहषीपन की कहानी कहता है जो विभाजन के दौरान हिंदू -मुसलमानों के दिमाग में उभरा। उपन्यास पर फिल्म निर्देषक गोविंद निहलाणी ने फिल्म बनायी जिसे दूरदर्षन सहित अन्तर्राष्ट्रीय फिल्म महोत्सव दिल्ली में भी दिखाया गया। सारे देश में 'तमस' को लेकर एक अभूतपूर्व बहस का वातावरण देखने को मिला।

निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि अच्छे व गम्भीर सिनेमा के निर्माण में सृजनात्मक साहित्य का महत्वपूर्ण योगदान है। विष्व के कोने-कोने में आज गंभीर साहित्य के ऊपर गंभीर सिनेमा का निर्माण हो रहा है जिसमें हमारे परिवेष से उपजे दुखः-दर्द बड़ी सहजता और मह□ा लिए सामने आये है। आज तक साहित्य पर बनी सभी फिल्मों को दर्षकों ने सराहा है। साहित्य की गुमनाम रचनाओं को हर वर्ग के लोगों तक पहुँचाने का श्रेय सिनमा को ही जाता है। वैसे तो साहित्य केवल बुद्धिजीवियों अथवा किसी वर्ग विषेष को ही अपनी ओर आकर्षित करता है, परन्तु साहित्य पर बनी फिल्मों के माध्यम से देश का आम आदमी भी जिन्हें साहित्य के अर्थ तक का पता नहीं है, साहित्यिक कृतियों व साहित्यकार की कल्पनाओं से परिचित हो जाता है। सिनेमा का भविष्य साहित्य व साहित्यकारों से सदैव प्रेरित होता रहेगा।

सहायक पुस्तकें

भारत में संचार माध्यम- सम्पादक- डॉ. संजीव भानावत

मीडिया विमर्ष आधुनिक संदर्भ - डॉ. रामलखन मीणा

साहित्य के विविध आयाम - डॉ. सुधेष - नालंदा प्रकाषन, दिल्ली

सिनेमा और समाज - विजय अग्रवाल- सत्साहित्य प्रकाषन, दिल्ली

हिंदी सिनेमा का इतिहास - मनमोहन चढ्ढा